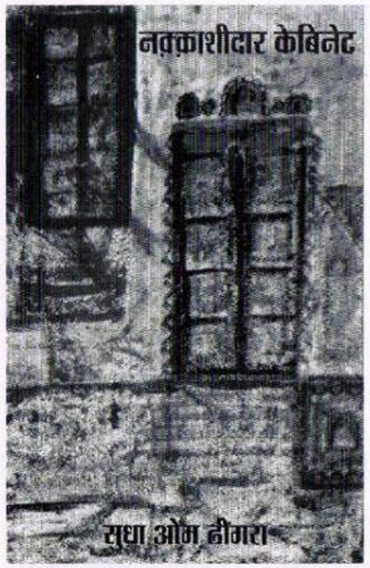

नक्काशीदार कैबिनेट : नारी-संघर्ष की एक सजीव गाथा

डॉ॰ अमिता

'नक्काशीदार कैबिनेट' सुधा ओम ढींगरा का 2016 में प्रकाशित नवीन उपन्यास है। सुधा ओम ढींगरा का विदेश (अमेरिका) में रहते हुए अपने देश भारतवर्ष और प्रांत (पंजाब) से गहराई से जुड़े रहना इस बात को सिद्ध करता है कि उनके भीतर भारत की मिट्टी की महक ज़िंदा है। उसका दर्द, पीड़ा और संवेदनाएँ जीवंत हैं। उनका उपन्यास 'नक्काशीदार कैबिनेट' मूल रूप में पंजाब प्रांत के एक परिवार और उसके साथ उसके परिवेश के बनते-बिगड़ते रिश्तों की कथा है, जिसमें नारी-संघर्ष बड़े प्रभावशाली रूप में उभरा है। नारी-संघर्ष में सोनल और मीनल की कहानी बड़े मर्मस्पर्शी रूप में उपन्यास के पृष्ठों पर रूपायित है। इस संघर्ष में सोनल जैसी लड़की का साहस और धैर्य पाठक के हृदय को छू लेता है। इसके साथ ही पंजाब से विदेश की ओर आकर्षण जाल में फँसी नारियों के विवाह के चक्रव्यूह को सूधा जी ने बड़ी सच्चाई से उतारा है। नशाखोरी, आतंकवाद और खालिस्तान जैसी समस्याओं में और संवेदनाओं के मध्य गुरु तेगबहादुर, गुरु गोविंदसिंह जैसे महान गुरुओं के हिंदूधर्म की रक्षा के लिए बलिदान की कहानी रोचक ढंग से लेखिका ने सुनाई है। लेखिका की मानवतावादी दृष्टि सर्वत्र सजग है।

उपन्यास में डॉ॰ संपदा और सार्थक पति-पत्नी हैं। विदेश (अमेरिका) में रहते हुए अपने देश और पंजाब से गहरे जुड़े प्रतीत होते हैं। अमेरिका में 'हरीकेन' और 'टॉरनेडो' तूफान पूरी शक्ति के साथ उनके प्रांत में आ जाते हैं, जिसके कारण बारिश और चक्रवात उनके निवास के स्थान पर जबरदस्त क्षति पहुँचाते हैं। उनके घर में पानी घुस आता है और पेड़ टूटकर उनका घर तोड़ देते हैं। इसी प्रकार जहाँ अनेक नुकसान होते हैं, वहीं नक्काशीदार कैबिनेट रोजवुड से बना हुआ (जो मध्ययुगीन कला का सुंदर नमूना) क्षतिग्रस्त हो जाता है। वह पानी में औंधा पड़ा होता है। उसमें वर्षों की यादें थीं। इसमें एक काले रंग वाली डायरी भी थी जिसे फुर्सत में लेखिका पढ़ती जाती है और स्मृतियों में बसी कहानी डायरीशैली में उपन्यास पर उतरती जाती है। कहानी वर्तमान से अतीत की ओर, फिर अतीत से वर्तमान में आ जाती है।

डॉ॰ संपदा एक समाजसेवी संस्था से वर्षों से जुड़ी है। वहाँ उसकी मुलाकात सोनल से होती है। उसकी चाल-ढाल और लहजे से डॉ॰ संपदा समझ जाती हैं कि वह एक शिक्षित लड़की है और ग्रामीण पंजाब से संबंधित है। उपन्यास में प्रारंभ में ही यह संदर्भ स्पष्ट हो जाता है, 'पहली

मुलाकात में वह मेरे इतने करीब आ गई कि हम बड़ी देर तक बैठे बातें करते रहे...जब तक वह शारीरिक और मानसिक रूप में सशक्त नहीं हुई। इस देश में उसने अपने अस्तित्व को तलाशा और अपने पाँव पर खड़ी होकर, उन सबसे अपने हिस्से की खुशियाँ वापिस लीं, जिन्होंने जवानी और बचपन में उससे वे छीन ली थीं। मेरे लिए वह नारी सशक्तिकरण का जीवंत उदाहरण थी। उसने जीवन में घटनाओं, दुर्घनाओं, विश्वासघात, धोखा और फरेब के जिस दौर को देखा था, उन सबसे निकलकर उसने जो कर दिखाया वह खास था।' इस प्रकार वास्तव में यह उपन्यास सोनल के विकट व भयावह संघर्ष की रोचक कथा है, जो अनेक संघर्षों से लड़कर भी हारती नहीं है, टूटती नहीं है। अनेक लड़कियों के लिए उसका संघर्ष एक प्रेरणा के रूप में सामने आता है, जो विषम स्थितियों में डटकर लड़ती है।

उपन्यास में सोनल के दादा जी का नाम सोहनचंद मनचंदा था। उन्हें सब बाऊजी कहते थे। वे जमींदार थे। विरासत में दादा जी से जमींदारी पिताजी को मिली थी। पिताजी का नाम त्रिलोकचंद था, जो मिलिट्री से रिटायर होकर घर आ गए थे। मीनल और सोनल त्रिलोकचंद की दो पुत्रियाँ थीं। सोनल का चाचा मंगल आलसी, शराबी और जुआरी था। उसने चाचा जैसे रिश्ते को कलंकित किया था। मंगल की ऐयाश प्रवृत्ति की वजह से कोई माँ-बाप उसे अपनी लड़की देने को तैयार नहीं था। लेकिन पड़ोस के एक गाँव से रिश्ता आया तो दादा-दादी ने इंकार नहीं किया, उन्होंने सोचा कि लड़का सुधर जाएगा तो सोहनचंद मनचंदा ने मंगल का विवाह कर दिया। लेकिन मंगल में कोई सुधार नहीं आया। मंगल की पत्नी मंगला के साथ उसका भाई भी उनके साथ रहने लगा। मंगला जिस घर से आई थी उस घर का माहौल भी अच्छा नहीं था। उनकी पुश्तैनी जायदाद को बाप और भाई उड़ा चुके थे। मंगल और उसका साला शराब, ताश, जुए में व्यस्त रहते और गाँव की बहू-बेटियों पर फब्तियाँ कसते। सोनल की माँ बी॰ए॰ पास थीं इसीलिए मीनल और सोनल को पढ़ाना चाहती थीं। उपन्यासकार द्वारा नारी-उत्कर्ष मीनल और सोनल के परिप्रेक्ष्य में साकार हुआ है।

बाऊ जी ने मंगल-मंगला और उसके भाई को खेतों में बने घर में पहुँचवा दिया। मीनल ने इस कार्य में दादा-दादी, पिताजी-माँ के लिए सहयोग दिया था। मीनल के व्यवहार पर मंगला कह गई, 'मीनल तुझे तो मैं देख लूँगी'...यह वह समय था, जब पंजाब में अधिकतर युवक दुबई, कनाड़ा और खाड़ी के देशों में जाने शुरू हो गए थे। कई घरों के लोग पहले से इंग्लैंड में थे। विदेश से पैसा आ रहा था। पढ़ने-लिखने की तरफ किसी का रुझान नहीं था। परिणाम यह हो रहा था कि खाली दिमाग, पैसे की अधिकता और नशा के वे आदी लोग निकम्मे बनते जा रहे थे।'

इस वातावरण के चित्रण में लेखिका ने कौशल से काम लिया है। कथा में रोचकता, जिज्ञासा, कौतूहल बना रहता है। कथा के प्रवाह में पाठक पृष्ठ पर पृष्ठ पढ़ता जाता है और कथा के प्रवाह के साथ बहता जाता है। मीनल और सोनल के साथ पम्मी (परमिंदर) और सुक्खी (सुखवंत) सुखविंदर का भी उल्लेख मिलता है। ये शिक्षित वातावरण के लड़के हैं और इनके परिवार को कामरेडों का परिवार भी कहा जाता है। मीनल को पम्मी प्यार करता है। किंतु मीनल मंगला चाची के दुष्कर्मों का शिकार होकर मारी जाती है। मंगल और दिलगीर पकड़े जाते हैं। उन्होंने गुनाह कबूल किए। दिलबाग और दिलशाद भी पकड़े जाते हैं। मंगला के साथ उनके माँ-

बाप और दो भाई भी रहने लगते हैं। मीनल की हत्या के केस में जो फैसला आया, उसमें दिलबाग और दिलशाद को फाँसी की सजा सुनाई गई और मंगल तथा दिलगीर को उम्रभर का सख्त कारावास। मंगला के बाप ने कहा, 'उसने अपनी सुंदर बेटी मंगल जैसे नालायक के पल्ले इसीलिए बाँधी थी, उसकी नजर बाऊजी की जमीनों, हवेली और इस कमरे पर थी, जिसमें पीढ़ी दर पीढ़ी से हीरे जवाहरात, सोना और चाँदी दबे पड़े थे। उन्हें तो वह लेकर रहेगा, चाहे उसके अपने दो और बेटे गँवाने पड़े...।' उपन्यास में सोनल महाराजा रणजीतसिंह के समय का वर्णन करती है। और तत्कालीन पंजाब की आंतरिक और बाहरी स्थिति का उल्लेख करते हुए यह स्पष्ट करती है कि हमारे परिवार के बुजुर्गों के पास तोशखाने का काफी धन था। वे महाराजा रणजीत सिंह के शासनकाल में तोशखाने थे। उपन्यास में वर्णन शैली बेजोड़ है।

उपन्यास में पम्मी के मँझले भाई सुक्खी (सुखवंत) से सोनल की दोस्ती हो जाती है। सुक्खी को पढ़ने का शौक था। सोनल बताती है कि सुक्खी की किताबों से वह भी साहित्य की अनेक पुस्तकें पढ़ जाती है। उसने यूरोप और हिंदी साहित्य के अनेक लेखकों को पड़ा था सुक्खी, पम्मी और सोनल जैसे अनेक युवक-युवतियाँ प्रगतिशीलता की नई सोच से जुड़ने लगे। ये लोग किसानों और दलितों को उनके अधिकारों के प्रति सचेत करने लगे। सोनल डी॰ए॰वी॰ कॉलेज में पढ़ी। उसने बी॰ए॰ ऑनर्स करने के बाद साइक्लोजी में एम॰ए॰ किया। लेखिका ने ग्रामीण परिवेश को प्रगतिशीलता की ओर अग्रसर करके नई सोच को प्रश्रय दिया है, जो समयानुकूल आवश्यकता थी। लेखिका ने इस दौर में खालिस्तान की लहर का उल्लेख भी किया है, जिसमें अधिकांश युवा भटक गए थे, लेकिन कुछ युवा इस हिंसा का विरोध कर रहे थे जिसमें निर्दोष लोगों की हत्या हो रही थी। पम्मी जैसे युवा की भी खालिस्तानी हत्या कर देते थे, क्योंकि वह निर्दोष लोगों की हिंसा के विरोध में होता है। परिवेश के वस्तुगत सत्य को सच्चाई के साथ लेखिका ने जीवंत बनाया है। आपरेशन ब्लू स्टार, इंदिरा की हत्या और तदनंतर फैली हिंसा का उपन्यासकार ने सजीव चित्रण किया है 'इस दौर में पंजाब, दिल्ली और देश के अन्य भागों में हिंसा भड़क उठी थी। और इस हिंसा ने वीभत्स रूप धारण कर लिया था। इसकी आड़ में, आतंकवाद के नाम पर कई लोगों ने तो आतंकवादी रूप घर निजी रंजिशें निकालनी शुरू कर दी थीं।' लेखिका ने 1980 के आस-पास के परिवेश की सच्चाई के साथ उपन्यास में चित्रित किया है जो एक ऐतिहासिक दस्तावेज बनकर उभरता है।

सुक्खी (सुखवंत) जो सोनल का दोस्त होता है, वह आई॰पी॰एस॰ में उत्तीर्ण होकर पुलिस अफसर हो जाता है। एक हादसे में बाऊजी, पिताजी और बीजी को गोलियों से भून दिया जाता है। केवल सोनल और उसकी माँ घर में बच जाते थे। यह मर्मस्पर्शी कथा यहीं खत्म नहीं होती। सोनल के मामा, नाना परिवार सहित सोनल के घर पर आकर रहने लगते हैं। वे आए थे दुख में शामिल होने के लिए, लेकिन उन्होंने सोनल के घर पर डेरा जमा लिया। झाई कहती थी 'उनके मायके वाले भी कम स्वार्थी नहीं' यह सारा खेल, धन-संपत्ति को हथियाने के लिए होता है, जिसमें भावानात्मक रिश्तों की कोई जगह नहीं होती, केवल खोखलापन दिखाई देता है। सोनल के चाचा, चाची, मामा, नाना के सभी रिश्तों में कहीं आत्मीयता न थी।

इस कथा में सबसे पीड़ादायी स्थिति तब आती है, जब डॉ॰ बलदेवसिंह की शादी सोनल से करवाई जाती है। यह डॉ॰ बलदेव झूठ फरेब का पुतला होता है, जिसका वास्तव में सुलेमान

ISSN 0975-735X

नाम होता है। ननिहाल की ओर से रचे गए नाटक में सोनल फँस जाती है। उसे समझाया जाता है कि बलदेव उसे अमेरिका में पीएच॰डी॰ करने देगा-'बलदेव ने मुझे बताया था कि वह अमेरिका में डॉक्टर है और वह मेरी इच्छा से वाकिफ हो गया है। वह मुझे वहाँ साइक्लोजी में पीएच॰डी॰ जरूर करवाएगा।' सोनल को सुक्खी बहुत अच्छा लगता था। वह वास्तव में उसे बहुत प्यार करती थी। पर माँ ने समझाया, 'दिल को सँभाल ले मेरी बच्ची, मास्टरजी का एक बेटा जा चुका है। दूसरे की जिंदगी खतरे में डालने का तुझे कोई हक नहीं। बंदूक की गोलियाँ किसी की सगी नहीं होती। तुमसे अधिक इसे कौन समझ सकता है? मन को मार ले और आगे होने वाले विनाश को रोक। जान है तो जहान है। तुम्हारी और मेरी जान को खतरा है।'

सोनल सोचती है मेरे सामने माँ के अतिरिक्त कौन था। माँ ने ठीक ही समझाया कि सुक्खी का भाई पम्मी पहले ही गोलियों का शिकार हो गया था। इस स्तर पर आकर सोनल बहुत अचेत हो जाती है, सुक्खी को लेकर उसका हृदय टूटता है' माँ ने बाऊजी और पिताजी की कसम दे दी थी। मुझे शादी तो अब अमेरिका के डॉक्टर से करनी ही पड़ेगी। मेरे पास जो विकल्प था, वह छूट गया था। समुद्र के किनारे खड़ी एक खूबसूरत जहाज को देख रही थी जिस पर सवारी की मौन इच्छा मेरे भीतर पता नहीं कबसे पल रही थी, उस आकांक्षा को अब दबाना पड़ा था।'

उपन्यास में सोनल का यह दर्द अपने समूचे आवेग में फैला हुआ है, जो पाठक के मर्म को छू लेता है। और फिर वही होता है, जिसकी सोनल को आशंका थी। डॉ॰ बलदेव का झूठ सामने आता है। वह केवल उसकी हीरे, जवाहरात जैसी दौलत को हड़पने के लिए वह नाटक रचता है। उपन्यास में बलदेव अपने पारिवारिक लोगों को कहता है-'...पहले इसका विश्वास जीतो। उसके नाने को वादा किया है, कागजों पर उसके साइन करवा कर दूँगा और बदले में उसके घर में पड़े हीरे मेरे होंगे। मुझे हीरे चाहिए। फिर हम सब इकट्ठे उसे नोच खाएँगे।' सोनल को जब यह ज्ञात हो जाता है तो वह इस नरक से भागने का प्रयत्न करती है, 'मुझे लगा, मैं धरती में धँसी जा रही हूँ, दीवार का सहारा लेकर मैंने अपने आपको सँभाला। घबराने और बेचैन होने का समय नहीं था। पता नहीं कहाँ से मुझमें इतनी फुर्ती आ गई, मैंने चारों ओर नजर दौड़ाई। कमरे में खिड़की थी, पर शीशा लकड़ी के फ्रेम में फिट था, वह खिड़की थी। जल्दी से जाकर देखा। वह बाहर को खुल सकती थी। दो पाटों की खिड़की थी। ज्यादा ऊँची भी नहीं थी। मैं उस तक पहुँच सकती थी। मुझे पता भी नहीं चला, कब से उस खिड़की से बाहर आ गई और उसके साथ लगे वृक्ष पर झूलने लगी। वृक्षों पर चढ़ना-उतराना तो बचपन में सीखा था। खूब कूदी हूँ वृक्षों पर। आसानी से उतर गई।' लेखिका की कलम से सोनल के साहस का यह चित्रण बहुत प्रभावशाली बनकर उपन्यास के सौंदर्य को बढ़ा रहा है।

लेखिका यह बताना चाहती है कि उपन्यास में डनीस और रॉबर्ट सोनल को शरण देते हैं। डनीस और रॉबर्ट जैसे लोग भी दुनिया में हैं, जो बेसहारा को सहारा देकर उसके संरक्षण में जीवन की सार्थकता ढूँढ़ते हैं। सोनल हिम्मत जुटाती है। सोनल उपन्यास में एक स्थान पर कहती है, 'बाऊजी, बीजी और पिताजी की मौत के बाद मैं एक रात भी चैन से नहीं सोई थी। यही डर लगा रहता था, पता नहीं कौन कहाँ से आकर, कब मुझे मार डालें।'

लेकिन सोनल की कथा यहीं खत्म नहीं होती। सोनल बलदेव जैसे दुष्ट लोगों को पुलिस के हाथों पकड़वाने के लिए कृतसंकल्प हो जाती है। रॉबर्ट और डनीस के साथ के बाद वह

लेखिका अपने इस वक्तव्य से अपने देश में जो असुंदर है, उसे सुंदर बनाने के लिए प्रयत्नशील दिखाई देती है। विदेश में बसी उपन्यासकार वहाँ की व्यवस्था और मूल्यों से प्रभावित हैं। सरकारी, गैरसरकारी संस्थाओं के साथ लोग भी अपने दायित्व को समझते हैं, 'तकनीकी प्रगति से यह लाभ अवश्य हुआ कि किसी भी तरह के संकट के समाचार विभिन्न संचार माध्यमों के माध्यम से प्रत्येक मनुष्य तक पहुँच जाते हैं और हरेक को कठिन घड़ी के लिए तैयार होने का समय मिल जाता है। इस देश की व्यवस्था बड़ी मुस्तैद है और यहाँ के जीवन की सबसे बड़ी खूबी है मनुष्य के जीवन की महत्ता को समझा और आने वाले खतरों को गंभीरता से लेना। सरकारी तंत्र अप्रत्याशित घटनाओं के जूझने के लिए सर्तकता से तैनात हो जाता है। स्थानीय लोग और गैरसरकारी संस्थाएँ भी सचेत हो जाती हैं। हर कार्य को 'सरकार का काम है' नहीं समझा जाता। लोग स्वयं भी अपने लिए खड़े होते हैं।'

उपन्यास में सोनल, रॉबर्ट और डनीस के यहाँ शरण लेती है। वह उनसे प्रभावित होती है। 80 वर्ष के आस-पास की उम्र में भी दंपती बच्चों पर आश्रित नहीं रहते, 'जब तक हाथ-पाँव काम कर रहे हैं, हम किसी पर भी यहाँ तक कि बच्चों पर भी निर्भर नहीं रहना चाहते। जब शरीर साथ छोड़ेगा तो उन्होंने ही हमारी देखभाल करनी है। अभी से उन्हें क्यों परेशान करें।'

सोनल, रॉबर्ट अंकल को डनीस आंटी के साथ घर के काम में हाथ बँटाते देखती है और सोचती है कि हमारे देश में तो सारे काम पत्नी को ही करने होते हैं। यह समझ रॉबर्ट और डनीस जैसे लोगों से लेनी चाहिए।

तूफान की आशंकाओं का चित्रण स्वाभाविक जान पड़ता है। परिवेश का प्रामाणिक चित्र उपन्यास में उभरता है, 'उस दिन वातावरण में घबराहट थी। तनाव था। बेचैनी थी। सड़कों पर कारें तेजी से भाग रही थीं। शहर के सारे ग्रोसरी स्टोर खाली हो चुके थे। लोगों ने खाने-पीने की वस्तुओं से घर भर लिए थे। एक अनजाना भय सबके भीतर बैठ चुका था। किसी को पता नहीं था, क्या होनेवाला है और क्या-क्या उन्हें भुगतना पड़ेगा? सोचकर ही लोग परेशान थे।'

विदेशी परिवेश की अभिव्यंजना में लेखिका को पर्याप्त सफलता मिली है। उपन्यासकार अपने वतन के रिश्ते-नातों की पीड़ा से जुड़ती है और मैत्रीभावना के मूल्य को समझाती है, 'यहाँ तो मित्र ही परिवार हैं। दु:ख-सुख के भागीदार। अपने परिवार तो देश में छूट गए और हाथ ही छूट गए ढेरों पल, सुखद यादें, रिश्ते और नाते। उनके लिए हम परदेसी हो गए और साथ ही बन गए मेहमान।'

उपन्यास में चित्रात्मकता जगह-जगह अपना वैशिष्ट्य बनाए हुए है, 'सड़क पर लोग दौड़ रहे थे। जागिंग कर रहे थे। मैं उन्हीं के साथ दौड़ने लगी। नाक की सीध में कई ब्लाक पार कर गई।...हल्का-हल्का घुसपुसा हो रहा था। समझ नहीं आ रहा था किस तरफ जाऊँ।'

लेखिका ने सरल, सहज भाषा का प्रयोग किया है। तत्सम, तद्भव शब्दों के साथ पंजाबी, अँग्रेजी शब्दों का सहज प्रयोग द्रष्टव्य है–'भारतीय मूल के लोगों के पास दालें, चावल, और आटा तो काफी मात्रा में होता है फिर भी बहुतों ने डिब्बाबंद फूड अपने स्टोर में समेट लिया था। घर-घर में टार्च लाइट्स, फ्लैश लाइट्स, बैटरियाँ, मोमबत्तियाँ इत्यादि कुछ इकट्ठा किया जा रहा था। अगर बिजली आनी बंद हो जाए तो वे काम आएँगी। जिन घरों में बिजली के चूल्हे थे, उन्होंने गैस के सिलेंडर खरीद लिए और साथ ही गैस का चूल्हा भी।'

ISSN 0975-735X

लेखिका ने अँग्रेजी भाषा का प्रयोग भी किया है, 'वॉलन्टियर्ज आर कमिंग फ्राम अदर स्टेट्स एंड अदर सोसयटीज टू हेल्प दा विकटम्ज...।' लेखिका ने पंजाबी भाषा का प्रयोग किया है। बाऊजी की भाषा है 'एथे दी पुलिस वि इनहाँ हरामियाँ ने खरीद लई ऐ, सारे एनहाँ दे अड्डे ते आंदे ने तो कोई मेरा साथ देन लई तियार नई।'

उपन्यासकार ने पंजाबी के सरल अनुवाद भी साथ में दिए हैं, ताकि उपन्यास की भाषा दुरूहता प्राप्त न कर सके।

उपन्यास में लेखिका की काव्यात्मक भाषा द्रष्टव्य है–

भगत सिंह ने पहली बार पंजाब को, जंगलीपन, पहलवानी व जहालत से
बुद्धिवाद की ओर मोड़ा था, जिस दिन फाँसी दी गई
उनकी कोठरी में लेनिन की किताब मिली
जिसका एक पन्ना मुड़ा हुआ था
पंजाब की जवानी को, उसके आखिरी दिन से
इस मुड़े पन्ने से बढ़ाना है आगे, चलना है आगे।
(पाश की एक कविता)

संवादों को उपन्यासकार जरा और तराशती तो अच्छा होता। छोटे और संक्षिप्त संवाद कथा के विकास और पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को अभिव्यक्त करने में सार्थक भूमिका निभाते हैं। लेखिका को स्वयं अधिक न बोलना पड़ता। उपन्यास में लेखिका की स्वयं ज्यादा बोलना पड़ रहा है। डायरी शैली का यह गुण भी है। मुख्य कथा सोनल के परिवार की है, जो आद्यंत कसावट लिए हुए है, कहीं बिखराव नहीं है। इसके साथ ही वर्तमान जीवन की कथा डॉ॰ संपदा और सार्थक की है, दोनों को उपन्यासकार ने कौशल से सुगुंफित किया है।

पात्रों के चरित्र-चित्रण में स्वाभाविकता है। कहीं कोई अस्वाभाविकता दिखाई नहीं देती। ऐसा नहीं लगता कि उपन्याकार ने केवल कल्पना के सहारे इन पात्रों को उपन्यास में उतारा है। ये पात्र जीते-जागते पात्र हैं, जो जीवन की सच्चाई को अभिव्यक्त करते हैं और जीवन को उत्कर्ष की ओर ले जाने की प्रेरणा देते हैं। सोनल और सुखवंत इसी आदर्शवाद की ओर अन्मुख हैं। सद् पात्रों को जहाँ ऊँचाई दी है, वहीं असद्पात्र भी अस्वाभाविक नहीं लगते हैं। लेखिका ने पात्रों की भीड़ नहीं इकट्ठी की है। पात्र लेखिका के हाथों की कठपुतली नहीं बने हैं। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि यह उपन्यास हिंदी उपन्यास-जगत की एक अमूल्य निधि है, जो प्रासंगिकता एवं उपादेयता जैसी विशेषताओं से युक्त है।

नक्काशीदार कैबिनेट (उपन्यास) सुधा ओम ढींगरा; प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर (म॰प्र॰), दूरभाष 07562405545; मूल्य : 150.00 रुपए, पृष्ठ 120, वर्ष 2016

डॉ॰ अमिता
तदर्थ प्राध्यापक
मैत्रेयी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

ISSN 0975-735X